डिग्री लेने के बाद मैं नित्य लाइब्रेरी जाया करता। पत्रों या किताबों का अवलोकन करने के लिए नहीं। किताबों को तो मैंने न छूने की कसम खा ली थी। जिस दिन गजट में अपना नाम देखा, उसी दिन मिल और कैंट को उठाकर ताक पर रख दिया। मैं केवल अंग्रेजी पत्रों के 'वांटेड' कालमों को देखा करता। जीवन यात्रा की फ़िक्र सवार थी। मेरे दादा या परदादा ने किसी अंग्रेज़ को गदर के दिनों में बचाया होता अथवा किसी इलाके का ज़मींदार होता, तो कहीं 'नामिनेशन' के लिए उद्योग करता। पर मेरे पास कोई सिफ़ारिश न थी। शोक! कुत्ते, बिल्लियों और मोटरों की माँग सबको थी। पर बी.ए. पास का कोई पुरसाँहाल न था। महीनों इसी तरह दौड़ते गुजर गये, पर अपनी रुचि के अनुसार कोई जगह नजर न आयी। मुझे अक्सर अपने बी.ए. होने पर क्रोध आता था। ड्राइवर, फ़ायरमैन, मिस्त्री, खानसामा या बावर्ची होता, तो मुझे इतने दिनों बेकार न बैठना पड़ता।

एक दिन मैं चारपाई पर लेटा हुआ एक पत्र पढ़ रहा था कि मुझे एक माँग अपनी इच्छा के अनुसार दिखाई दी। किसी रईस को एक ऐसे प्राइवेट सेक्रेटरी की जरूरत थी, जो विद्वान, रसिक, सहृदय और रूपवान हो। वेतन एक हजार मासिक! मैं उछल पड़ा। कहीं मेरा भाग्य उदय हो जाता और यह पद मुझे मिल जाता, तो जिंदगी चैन से कट जाती। उसी दिन मैंने अपना विनय-पत्र अपने फोटो से साथ रवाना कर दिया, पर अपने आत्मीय-गणों में किसी से इसका ज़िक्र न किया कि कहीं लोग मेरी हँसी न उड़ाएँ। मेरे लिए ३० रु. मासिक भी बहुत थे। एक हजार कौन देगा पर दिल से यह ख़याल दूर न होता! बैठे-बैठे शेखचिल्ली के मन्सूबे बाँधा करता। फिर होश में आकर अपने को समझाता कि मुझमें ऐसे ऊँचे पद के लिए कौन सी योग्यता है। मैं अभी कालेज से निकला हुआ पुस्तकों का पुतला हूँ। दुनिया से बेख़बर! उस पद के लिए एक-से एक विद्वान, अनुभवी पुरुष मुँह फैलाए बैठे होंगे। मेरे लिए कोई आशा नहीं। मैं रूपवान सही, सजीला सही, मगर ऐसे पदों के लिए केवल रूपवान होना काफी नहीं होता। विज्ञापन में इसकी चर्चा करने से केवल इतना अभिप्राय होगा कि कुरूप आदमी की ज़रूरत नहीं, और उचित भी है। बल्कि बहुत सजीलापन तो ऊँचे पदों के लिए कुछ शोभा नहीं देता मध्यम श्रेणी, तोंद भरा हुआ शरीर, फूले हुए गाल और गौरव-युक्त वाक्य-शैली यह उच्च पदाधिकारियों के लक्षण हैं और मुझे इनमें से एक भी मयस्सर नहीं। इसी आशा और भय में एक सप्ताह गुजर गया और अब निराश हो गया। मैं भी कैसा ओछा हूं कि एक बे सिर-पैर की बात के पीछे ऐसा फूल उठा, इसी को लड़कपन कहते हैं। जहाँ तक मेरा ख़याल है, किसी दिल्लगीबाज़ ने आजकल के शिक्षित समाज की मूर्खता की परीक्षा करने के लिए यह स्वाँग रचा है। मुझे इतना भी न सूझा। मगर आठवें दिन प्रातः काल तार के चपरासी ने मुझे आवाज दी। मेरे हृदय में गुदगुदी-सी होने लगी। लपका हुआ आया। तार खोलकर देखा, लिखा-स्वीकार है, शीघ्र आओ। ऐशगढ़।

मगर यह सुख-सम्वाद पाकर मुझे वह आनंद न हुआ, जिसकी आशा थी। मैं कुछ देर तक खड़ा सोचता रहा, किसी तरह विश्वास न आता था। जरूर किसी दिल्लगीबाज की शरारत है। मगर कोई मुजायका नहीं, मुझे भी इसका मुँहतोड़ जवाब देना चाहिए। तार दे दूँ कि एक महीने की तनख्वाह भेज दो। आप ही सारी कलई खुल जाएगी। मगर फिर विचार किया, कहीं वास्तव में नसीब जगा हो, तो इस उदंडता से बना-बनाया खेल बिगड़ जायगा चलो, दिल्लगी ही सही। जीवन में यह घटना भी स्मरणीय रहेगी। तिलस्म को खोल ही डालूं। यह निश्चय करके तार द्वारा अपने आने की सूचना दे दी और सीधे रेलवे स्टेशन पर पहुँचा। पूछने पर मालूम हुआ कि यह स्थान दक्खिन की ओर है।